॥ श्री ॥

‘नवरत्नमाला’

॥श्री दत्तो जयति॥

हा देह दृश्य जड अन्नविकार माता
तातास्रवीर्यज अमंगळ जीव जाता।
प्रेता न पाहति न हा मम रूपभूत
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥ १॥

त्वङ् मांसलोहितशिरास्थिसमूह देह
ज्या आंत श्लेष्ममळमूत्रचि मोहगेह।
हें होय नष्ट जलबुद् बुदसे अनंत
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥ २॥

मायाविनिर्मित पदार्थसमान देह
जो बिंदुमात्र असतांहि विमोहगेह।
वाढें क्षणोक्षणि विलक्षण निश्चितांत
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥ ३॥

पाण्यावरी लहरि येति जशा तशा ह्या
देहावरी सतत येंति दशा अशा ह्या।
बाल्यादि, शेखिं कृमिविड्भसितांत कांत
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥४॥

यद्रक्षणार्थ करितातिं कुकृत्य दुष्ट
जो षड् रसान्नपरिपोषित होयि पुष्ट।
येथेंचि तो पडतसे उघडा अनंत
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥५॥

वर्णाश्रमादिक सुखादिक यन्निमित्त
संबंध रूप भय कर्महि यन्निमित्त।
तो हाचि अन्नमय कोश जयासि अंत
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥ ६॥

हा प्राण त्यामधिं सदोदित खेळताहे
जो इंद्रियां कवळुनी, मम रूप नाहे।
हेही अचेतनचि, चेतन मी प्रशांत
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥ ७॥

जें चंचळ क्षणभरी न वसे, विकारी
तें होय हें मन, न मी कधिंही विकारी।
खद्योततुल्य मति तीहि न मी, प्रदीप्त
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥ ८॥

हा जात येत असतो जगिं लिंगदेह
अज्ञानकारणतनू न च तीन देह।
माझें स्वरूप अज अक्रिय मी अनंत
कूटस्थ मी तरि सदोदित साक्षिभूत॥ ९॥

कर्ता न मी प्रत्यगभिन्न आत्मा
भोक्ता न मी अद्वय सच्चिदात्मा।
हें ज्ञात व्हाया नवरत्नमाला
हें कंठि घाला हरि हे हि काला॥ १०॥

जो कर्म फळ दे वारीं स्मरतां कष्ट उद्धरी।
भजतां त्या दत्तदेवा पदीं हे अर्पिली नवा॥ ११॥

॥ इति प.प.श्रीवासुदेवानंदसरस्वती स्वामी विरचित नवरत्नमाला संपूर्ण॥